अवस्था है। **मद्भक्तिं लभते पराम्** (भगवद्गीता १८.५४) श्रीकृष्णचरणारविन्द में मन को अर्पित किए बिना ब्रह्मभूत अर्थात् ब्रह्मतुल्य चिद्गुणों से युक्त नहीं हुआ जा सकता। **स वै मनः कृष्णपदारविन्दयोः।** निरन्तर भगवद्भक्ति के परायण अथवा कृष्णभावना से भावित रहना रजोगुण और सम्पूर्ण दोषों से वास्तव में मुक्ति है।

युञ्जन्नेवं सदात्मानं योगी विगतकल्मषः।
सुखेन ब्रह्मसंस्पर्शमत्यन्तं सुखमश्नुते।।२८।।

युञ्जन् =योगाभ्यास में तत्पर; **एवम्** =ऐसे; **सदा** =निरन्तर; **आत्मानम्** =आत्मा; **योगी** =योगी; **विगत** =मुक्त; **कल्मषः** =सम्पूर्ण सांसारिक दूषणों से; **सुखेन** =दिव्य सुख से; **ब्रह्मसंस्पर्शम्** =परतत्त्व के नित्य सान्निध्य में स्थित; **अत्यन्तम्** =सर्वोपरि; **सुखम्** =सुख को; **अश्नुते** =प्राप्त होता है।

अनुवाद

इस प्रकार आत्मस्वरूप में दृढ़तापूर्वक स्थिर होकर सब पापों से मुक्त हुआ योगी परमचेतन की सन्निधि में परम सुख का अनुभव करता है।।२८।।

तात्पर्य

स्वरूप-साक्षात्कार का अर्थ परतत्त्व श्रीकृष्ण के सम्बन्ध में अपने स्वरूप को जानना है। जीव भगवान् का भिन्न-अंश है, अतएव उसका स्वरूप भगवान् की सेवा करना है। भगवान् से इस अलौकिक सम्पर्क को **ब्रह्मसंस्पर्श** कहते हैं।

सर्वभूतस्थमात्मानं सर्वभूतानि चात्मनि।
ईक्षते योगयुक्तात्मा सर्वत्र समदर्शनः।।२९।।

सर्वभूतस्थम् =सब प्राणियों में स्थित; **आत्मानम्** =परमात्मा को; **सर्व** =सम्पूर्ण; **भूतानि** =प्राणियों को; **च** =भी; **आत्मनि** =परमात्मा में; **ईक्षते** =देखता है; **योग-युक्त-आत्मा** =कृष्णभावनाभावित पुरुष; **सर्वत्र** =सब में; **समदर्शनः** =समभाव से देखने वाला।

अनुवाद

सच्चा योगी सब प्राणियों में मुझे देखता है और प्राणीमात्र को मुझ में स्थित देखता है। उस आत्मज्ञानी महापुरुष को वास्तव में सब में मेरा दर्शन होता है।।२९।।

तात्पर्य

कृष्णभावनाभावित योगी पूर्ण द्रष्टा है, क्योंकि वह परब्रह्म श्रीकृष्ण को परमात्मा के रूप में प्राणीमात्र के हृदय में विराजमान देखता है। **ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति।** अपने परमात्मा रूप से श्रीभगवान् कुत्ते और ब्राह्मण, दोनों के हृदय में हैं। संसिद्ध योगी जानता है कि प्रभु नित्य प्रकृति से परे हैं; अतः कुत्ते अथवा ब्राह्मण में स्थित होने पर भी माया उनका स्पर्श नहीं कर सकती। यही श्रीभगवान् की परम समता है। जीव-हृदय में जीवात्मा भी विद्यमान है, परन्तु वह सर्वव्यापक नहीं है। जीवात्मा तथा परमात्मा में यही अन्तर है। जो वास्तव में योग का अभ्यास नहीं करता,